उपयोग लक्षणो जीवः

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीव का लक्षण है उपयोग। उपयोग ज्ञान और दर्शन के साथ होता है। उपयोग को चार रूपों में देख सकते हैं। पहला है–अशुद्ध उपयोग। कोई व्यक्ति बिना किसी कारण के किसी हिरण का शिकार करता है, जिसका प्रयोजन केवल शिकार करने का आनन्द प्राप्त करना ही हो,साथ ही यदि वह व्यक्ति यह गर्व भी करें कि मैंने कैसा निशाना लगाकर हिरण को मार गिराया। इस प्रकार केवल व्यक्तिगत आनन्द और मौज के लिए किसी मासूम प्राणी की हत्या करना आत्मा का अशुद्ध उपयोग कहलाता है। किसी का घर जलाकर गर्व करना, गलत काम करके हंसना, किसी को नुकसान पहुंचाकर अहंकार करना ये सब अनुचित कृत्य हैं। ऐसे आत्मा के अशुद्ध उपयोग का फल नरक गति है।

दूसरा उपयोग अशुभ उपयोग कहलाता है। परिवार में बीबी, बच्चों को भूख से तड़पता हुआ देखकर यदि कोई व्यक्ति किसी जीव का शिकार करके घर ले आए और उसके मन में यह विचार आए कि मैंने बुरा कार्य किया है। ऐसा करना बहुत गलत है तो यह आत्मा का अशुभ उपयोग हुआ। अशुद्ध और अशुभ उपयोग में क्रिया एक प्रकार की हुई है किन्तु एक व्यक्ति अपनी क्रिया में आनन्द महसूस करता है और अहंकार करता है जबकि दूसरा व्यक्ति अपने कर्म पर पश्चाताप करता है और आंसू बहाता है। दोनों में मूलभूत अन्तर हर्ष और विषाद का है। इस प्रकार आत्मा के अशुभ उपयोग वाले जीव सैकिण्ड क्लाश के यात्री हैं। वे तिर्यंच गति के अधिकारी हैं।

तीसरा शुभ उपयोग है। भले ही घर के स्वजन भूख से तिलमिला रहे हों फिर भी जब कोई व्यक्ति स्पष्ट कहता है कि मुझे किसी की हत्या करके भूख नहीं शान्त करनी है तो यह आत्मा का शुभ उपयोग है। दूसरों के लिए शुभ भावना रखना, परोपकार करना, हृदय में सच्चाई और नैतिकता लाना आत्मा के शुभ उपयोग के अन्तर्गत आते हैं। शुभ उपयोग कुछ ही प्राणियों में मिलता है। अन्यत्र शुभाशुभ उपयोग ही दिखलाई देता है। शुभाशुभ उपयोग वाले प्रथम श्रेणी

के यात्री हैं। इन्हें मनुष्य गति का फल मिलता है। केवल शुभ उपयोग वालों में रहने वाले लोग देवगति को प्राप्त करते हैं।

चौथा उपयोग शुद्ध उपयोग है। शुद्ध उपयोग वाला व्यक्ति सदैव शुद्ध ही देखता है। वह भीतर के माल की परख करता है बाहरी पैकिंग को नहीं देखता। शुद्ध उपयोग आत्मोपलब्धि के बाद ही उत्पन्न होता है। उपयोग सम्पूर्ण होने के बाद केवल ज्ञान प्राप्त होता है। शुद्ध फल का उपयोग मोक्ष है। हम सम्पूर्ण शुद्ध उपयोक्ता हैं। शुद्ध उपयोगी के आचरण में अहिंसा का पालन होता है।

जो सांसारिक विषय–सामग्री है, वह और उसका भोक्ता है आत्मा ये दोनों संयोग होते ही बन्ध हो जाते हैं। कर्म पुद्‌गलों के ग्रहण को बन्ध कहा जाता है। जीव के द्वारा कर्म पुद्‌गलों का ग्रहण क्षीर–नीर की भांति परस्पर आश्लेष होता है, उसे बन्ध कहा जाता है। वह प्रवाहरूप से अनादि और जो भिन्न–भिन्न कर्म बंधते रहते हैं, उनकी अपेक्षा सादि है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और मन, वचन, काय की प्रवृत्ति ये सब कर्मों के आने के द्वार होने से आस्रव हैं। इनसे विपरीत सम्यक्त्व, देशव्रत, महाव्रत, मोह व कषायहीन शुद्धात्म परिणति तथा मन, वचन, काय के व्यापार की निवृत्ति ये सब नवीन कर्मों के निरोध के हेतु होने से संवर हैं।

आसव्र का निरोध करना ही संवर है। जिनसे कर्म रुकें, वह कर्मों का रुकना संवर है। नगर के द्वार अच्छी तरह बन्द हों, वह नगर शत्रुओं को अगम्य है। जीव का चरम और परम लक्ष्य है– मोक्ष प्राप्ति। जिसने समस्त कर्मों का क्षय करके अपने साध्य को सिद्ध कर सफलता प्राप्त कर ली वह मोक्ष का अधिकारी है। बन्ध हेतुओं मिथ्यात्व व कषाय आदि के अभाव और निर्जरा से सब कर्मों का आत्यन्तिक क्षय होना ही मोक्ष है। कर्मों का पूर्ण रूप से छूटना मोक्ष है। सम्यग् दर्शनादि कारणों से सम्पूर्ण कर्मों का आत्यान्तिक मूलोच्छेद होना मोक्ष है। जिस प्रकार बन्धन युक्त प्राणी स्वतन्त्र होकर यथेच्छ गमन करता है, उसी तरह कर्म–बन्धन मुक्त आत्मा स्वाधीन हो अपने अनन्त ज्ञानदर्शन सुख आदि का अनुभव करता है। मनुष्य गति से ही जीव को मोक्ष होना संभव है।

आयु के अन्त में उसका शरीर कपूरवत उड़ जाता है और वह स्वाभाविक ऊर्ध्व गति के कारण लोक शिखर पर जा विराजता है, जहाँ वह अनन्तकाल तक अनन्त अतीन्द्रिय सुख का उपभोग करते हुए अपने चरम शरीर के आकार रूप से स्थित रहता है और पुनः शरीर धारण करके जन्म—मरण के चक्कर में कभी नहीं पड़ता। ज्ञान ही उनका शरीर होता है।

दार्शनिक दृष्टि से यदि हम चिंतन करे तो बंधन और मुक्ति जीव के लिए है। कर्मों का बंधना बन्ध है। जो बंधे या जिसके द्वारा बांधा जाये या बन्धन मात्र को बन्ध कहते हैं। कषाय सहित होने से जीव कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है, वह बन्ध हैं। कर्म प्रदेशों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना, वह बन्ध है। मिथ्यादर्शनादि द्वारों से आए हुए कर्म पुद्गलों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना बन्ध है।